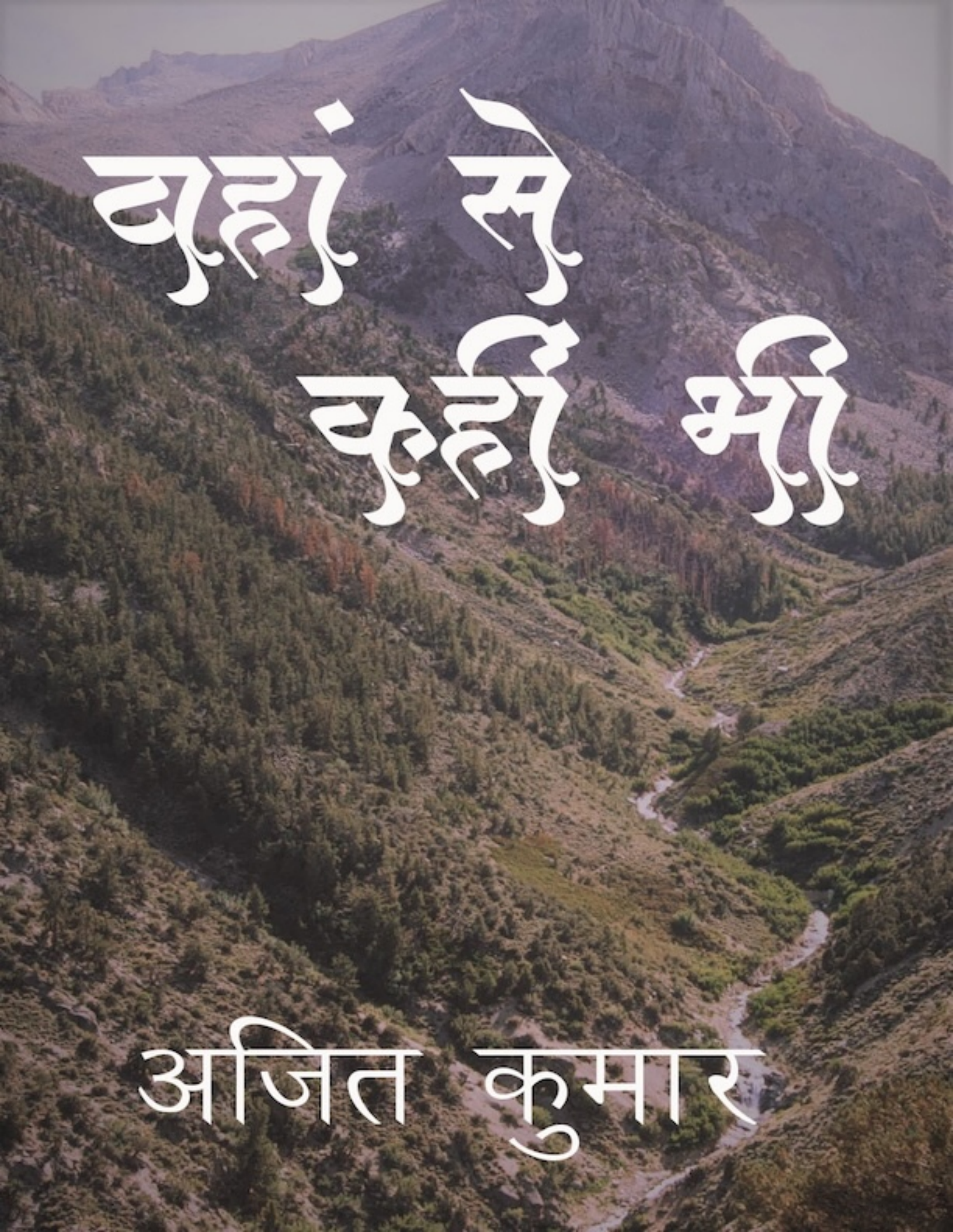
यहां से
कहीं भी
अजित कुमार

यहाँ से कहीं भी

(यात्रा-वृत्त)

अजित कुमार

यहाँ से कहीं भी

(यात्रा-वृत्त)

स्नेहमयी चौधरी को

जिनके नाते यात्राएँ संभव हुईं

परिचय

'आइ विल अराइज़ ऐंड गो नाउ, ऐंड गो टु इन्निज़फ्री'-अब मैं उठूँगा और जाऊँगा, मुझे जाना है इन्निज़फ्री -आयरिश कवि येट्स की यह पंक्ति बहुत समय से मन में अटकी हुई थी। मैंने जानना चाहा, कहाँ है-किसी सरोवर में स्थित वह एक द्वीप जहाँ मिट्टी की कुटिया बनाने, मटर बोने और शहद की मक्खियों के लिए छत्ता टाँगने की इच्छा कवि ने की थी ? शायद वह केवल एक सपना था जो येट्स या किसी और की तरह मेरी भी आँखों में आ समाया, जिसके पीछे मैं अपने बचपन के गाँव नईमपुर से लेकर आस्ट्रिया के महान संगीतज्ञ मोत्ज़ार्ट की नगरी साल्ज़बर्ग तक न जाने कहाँ-कहाँ भागता-भटकता रहा।

काश! मुझे अपना इन्निज़फ्री मिल जाता या फिर मैं 'इनइज़फ्री'- 'मन तो है मुक्त' की स्थिति में जी पाया होता। कितना सरल हो सकता था, तब यह मान लेना कि हम जहाँ भी हैं वहीं तो हैं-अपना इन्निज़फ्री। लेकिन इस मश्किल का आसान होना मुश्किल ही नज़र आया कि-

'हम वहाँ हैं जहाँ से हमको भी
कुछ हमारी ख़बर नहीं आती ।'

यह एक सफ़रनामा है। मुसाफ़िर को भला क्या चाहिए ! यही न कि रात के अँधेरे को चीरती-भागती रेलगाड़ी में उसकी सुख-निंदिया न टूटे; वह सही-सलामत अपनी मंज़िल तक पहुँच जाए। लेकिन अगर इंजन फकफकाता और सीटी पर सीटी मारता-पटरी से हिले ही नहीं और इससे बेख़बर मुसाफ़िर खुद को उसी प्लेटफ़ार्म पर अटका पाए जहाँ वह गाड़ी में सवार हुआ था, तो भला, इसके अलावा वह और क्या कह सकेगा कि 'अपनेराम का सफ़र 'यहाँ से कहीं नहीं' था।' या शायद वह उसे 'यहाँ से कहीं भी' समझ धीरज धरे।

-अजितकुमार

क्रम

जाही विधि राखे राम	:	5
दिल्ली तू मेरा दिल ले	:	10
सोने का वक्त	:	14
पहाड़ का वह सन्तरी	:	19
आश्रमों में खुलते होटल	:	25
सफ़र का नाम और नामा	:	28
इक रात में क्या-क्या !	:	47
जब हम रोम में हों	:	63
अपना-अपना गोंडा	:	72
घर-घर में आश्रम	:	76
फिसल पड़े तो	:	83

जाही विधि राखे राम

अब जब यह वक्त है कि दिल्ली से बिस्तर-बोरिया समेट हम प्लेटफार्म पर बिछा दें-जो भी पहली गाड़ी आए, उसी में सवार हो, जहाँ भी वह पहुँचाए, वहीं उतर जाएँ.. .अचम्भा होता है यह देख कि मनसूबे कुछ इस तरह बँध रहे है, जैसे हमनें अभी-अभी मिडिल की परीक्षा दी है और पंख तौलकर उड़ने के लिए तैयार हैं, एक झपट्टे में पूरे आकाश को नाप आएँगे।

शायद इसी को लक्षित कर किसी ने कहा था, 'बुढ़ापा बहुधा बचपन का पुनरागमन होता है।' प्रेमचंद की यह बात इसलिए भी ठीक जान पड़ती है कि टिकट कटाकर छुट्टी पाने की इस बेला में, सोच-विचार में पड़ गया हूँ कि नईपुर जाऊँ या उन्नाव ? लखनऊ या कानपुर ? इलाहाबाद या रामगढ़ ? या फिर दिल्ली में ही पड़ा रहूँ? या किसी ऐसी जगह जा बसूँ, जहाँ कोई भी-कुत्ता-कव्वा भी-अपना परिचित न हो ।

जानता हूँ, बिलकुल ठीक-ठीक यह बचपन का पुनरागमन तो नहीं ही है-ऊपर से भले ऐसा जान पड़ता हो। पर जगहों के सन्धान के प्रति बचपन में जो कुतूहल, जो उत्सुकता जो आह्लाद होता है, उससे नितान्त भिन्न मुझे चारों ओर से घिरते हुए अकेलेपन का जो अहसास अब होने लगा है, वही शायद मुझे नईमपुर से लखीमपुर तक का पल्ला पकड़ने को प्रेरित कर रहा है, जबकि भय लगता है, जिस भी कगार को थामने का यत्न करूँगा, वही तेजी से बहती धारा में छपाक् से गिरेगा।

बचो भाई, सब लोग मुझसे बचो। मैं उस बूढ़े दैत्य का प्रतिरूप हूँ, जो सड़क के किनारे दीन-हीन मुद्रा में बैठा था। एक नौजवान उधर से निकला। बूढ़े ने गिड़गिड़ाकर कहा, बेटा, मुझे उस चौराहे तक पहुंचा दो, अपाहिज-असहाय हूँ। दयावश जैसे ही नौजवान ने उसे अपने कंधे पर बिठाया, बूढ़े ने उसकी गर्दन अपनी दोनों टाँगों में फँसा